

काव्य-गजल

।। हमीं से हैं दिन बहुरंगी भी ।।

जीत लगे हम - वह बाजी भी ।
प्यारे - राजा को मात देते ।
दोष - सूरज को रात देते ।
लायमे हम - पौ गुलाबी भी ।
गुलशन - बहुरंग के अंगी होंगे ।
गुलशनों में - रहस्य नहीं होंगे ।
हमसे है बयार - सुलामी भी ।
उन्की हर चाल - शकुन चाल है ।
शकुन जाल नहीं - मकड़जाल है ।
दुम हिला, करे न - हर हं जी भी ।
असुं नहीं - होंट मुस्कान है ।
दिल बाग है - न बिरवायन है ।
हमीं से हैं दिन - बहुरंगी भी ।



मकसी

स्वागत है नववर्ष

आया मंगलमय नववर्ष ।
नित नवन नवन सुखपर,
नव पलक्य तरुवर बहू छाए,
हृदय अती उत्कर्ष ।
आया मंगलमय नववर्ष ।
पवित्र कलसल मंगल गाए,
खग मृग आपसु खेर भूषण,
विचरत हो अति हंग ।
आया मंगलमय नववर्ष ।
पुर्वि बयार बहाई बजाए,
कोयल मधुरी तान सुवर्ण,
स्वागत करत सहर्ष ।
आया मंगलमय नववर्ष ।
भर धर उत्सव मंगल छाए,
विधि हरि हर सब लोग मनाने,
स्वागत है नववर्ष ।
आया मंगलमय नववर्ष ।



आरा, भोजपुर, बिहार

एक ही चांद

खिन्नी हुई चांदनी में
खुली हुई छत्र पर
लेटा हुआ आदमी।
तन की विश्रान्ति से
मन में निःस्वप्न है,
'अह! आज चांद कितना उदास है।'
पर चांद? चांद तो प्रतीतिवैव
अमने ही अनमनन का।
तभी तो दूर, नदी के तट पर
प्रेमसी की गोद में
लेटा हुआ प्रेमी
कह रहा है,
'देखो तो, आज चांद
कितना सुंदर लग रहा है।'
कृष्ण
शिवपार्वती
विवार (परिचय)-महाराष्ट्र

क्षणिका

मैंस की बढ़ती किल्लत देख
लकड़ों ने कहा,
'अब आया अंडे
पहाड़ के नीचे...'
तभी समतामकर लाल
एलपीबी ने कहा,
'वो आ गया सिविलिकन...'
चल हट...पीछे...!
वक्तू वक्तू की बात है
अपनी अपनी औकात है,
चाल चलते सभी...
कभी रहक कभी मात है।
कोई ऊपर... कोई नीचे,
समय का पहिया घूमें घूम रहा
परिवर्तन प्रकृति का नियम है
गुस्से में
न घूमें
भी-बि... ?
कृष्ण कुमार
अजनबी

फिर सुबह आएगी...

रात की चारद चाहे जितनी गहरी हो,
अंधेरी की सांसें चाहे जितनी उदरी हो,
धके हुए खम्बों की अँधियों में चाहे
नींद भी रुककर बैठे हो कहीं-
पर यकीन खो...
फिर सुबह आएगी।
जब टूटते होसलों की अवाज
दिल में गुंजाती है,
जब हर रास्ता जैसे
खुद ही खुद से मुँह मोड़ लेता है,
जब उम्मीद की ली
हवा के झोंकों से कोपती है-
तब भी कहीं दूर, बहुत दूर,
रेशमी जन्म लेती है...
और धीरे-धीरे बढ़ती हुई
हम तक पहुँचती है।
ये रात बस एक इतिहास है,
थोड़ी सी उदास की कहानी है,
जिसमें दर्द की स्याही से
लिखे जाते हैं सबक-
कि गिरना अंत नहीं होता,
और थका जाना भी
इसारी फिस्तल नहीं।

देखो, उस क्षितिज के पार
एक हल्की सी रेखा उभर रही है,
वो सूरज की पहली सांस है,
वो कह रही है-
'तुम अकेले नहीं हो...'
पता पर उठती आंस की बूँदें
फिर से चमक उठेंगी,
पंखियों की खामोश चोंचों में
फिर से गीत उरेंगे,
और तुम्हारे दिल में
जो जमी है उदासी की परत-
वो भी पिघल जाएगी
धीरे-धीरे... चुन्मना।

थो धाम लो खुद को,
धो धाव और उदर जाओ,
ये रात जितनी भी लंबी हो-
उसका अंत तय है।
स्वोकि हर अंधेरा
फिस्ती उजागे की तैयारी होता है...
हर टूटन
किसी नई शुरुआत की आहट होता है...

और ये जीवन-
ये कभी रुकता नहीं...
इसलिए...
आँखों में थोड़ा सा यकीन रखो,
दिल में एक छोटी सी उम्मीद जगाओ-
क्योंकि चाहे
कूड़ भी हो जाए...
फिर सुबह
आएगी।



मुकेश कुमार
बिस्सा
जैवलमर

या देवी सर्वभूतेषु

जाहं रसी वहां सृजन शक्ति
न किस्म जनन प्राण-शक्ति
संचालिका ऊर्जा प्रशंसित
देवीय मूर्ति प्रति भक्ति
ना प्रतीकों प्रति आसक्ति
दैनिक मंत्रों की पक्ति
समझे अर्थ पर व्यक्तित
कुछ निद्रा शांति स्तुति
तुम्हा दया चेतना स्मृति
संहर कर पशुत्व वृत्ति
क्रोध मद मोह मुक्ति
प्रतीकों की गई आकृति
प्रकट हो देवीय पराशक्ति
अंधकार प्रवास, पुरुष स्त्री
संतुलन हेतु रची सृष्टि
सब मंगल
मंगल्ये देव शक्ति।
नील मणि
मेरठ -
मोबाइल नंबर -
9412708345



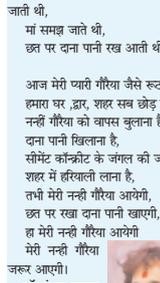
नन्दी सवारी

नन्हे-नन्हे दो बच्चे,
मोटार पर बैठे आँके।
आगे बैठा थोड़ा प्यारा,
पीछे बैठा भाई प्यारा।
धीरे-धीरे चलती गाड़ी,
देखते कितनी प्यारी सवारी।
हैसन-हैसते जाएँ आगे,
मनसे उत्सव संग ही भागे।
हवा लगे तो हँसी आए,
मोटार अपने बढ़ती जाए।
छोटे-छोटे मोठे सपने,
दोनों लगते कितने अमने।
मिलकर दोनों करे सवारी,
किसी को न दे, यह पिटावी।
नन्दी दुनिया, नन्हे यार,
बचपन कितना है
गुलजार।
- डॉ. सत्यवान
सौरभ

जन्ही गौरेया

गौरेया अब मेरे आंगन आती नहीं,
अब वो आकर चहचहाती भी नहीं,
सुबह उठते ही उसका खिड़की पर आकर
बैठना,
और चहचहावना अब वो सुनाती भी नहीं।
गौरेया का रोज छत्र पर आकर बैठना,
फुटक फुटक कर ची ची करते रहना,
एक दूसरे के ऊपर चोंच मारना रहना,
अब वह कूड़ भी दिखता नहीं।
आंगन के पेड़ों की छाँटों पर उसका बैठना
अब कभी कभी दिख जाता है,
उसके हुँड जैसे गाँव हो गए,
वह भी खामोश सी हो गई है,
इसलिए पर आंगन में फुटकना भूल गई है।
कमरे में लगे आँदने पर बैककर चोंच
मार्ना,
और उसमें खुद को देखकर,
जोर जोर से ची ची करना,
जैसे अपना चेहरा देखना भी भूल गई है।
वो कमरों में लगी तस्वीरों के पीछे,
तिनका तिनका झकड़ कर चुपके से,
अपना बौसला बनाना भी भूल गई है,
मेरी प्यारी गौरेया हमारा घर छोड़ गई है।
छाँटों पर उसके लिए रखा दाना पानी खाती
थी,
सकरो का दाना पानी खवत हो गया तो,
कमरे में आकर चह चहकर इरारा कर
जाती थी,
माँ समझ जाते थी,
छत्र पर दाना पानी रख आती थी।
आज मेरी प्यारी गौरेया जैसे रुक गई है,
हमारा घर, दार, शहर सब छोड़ गई है,
नहीं गौरेया को वापस बुलाना है,
दाना पानी खिलाना है,
सोमेट कॉन्क्रीट के जंगल की जगह,
शहर में हरियाली लाना है,
तभी मेरी नन्ही गौरेया आयेगी,
छत्र पर रखा दाना पानी खाएगी,
हर मेरी नन्ही गौरेया आयेगी
मेरी नन्ही गौरेया
जुस्सू आएगी।

डॉ संजय कुमार
मालवी
आदर्श, इंदौर
130564-90764



डॉ संजय कुमार
मालवी
आदर्श, इंदौर
130564-90764

'चल मेरे माई, तेरे हाथ जोड़ता हूँ'

ऊँट किस कलहट बैठेगा
या रहकर खड़ा ही अपना पसरा फेंकेगा
मरते जा रहे हैं, ऊँट पर बैठे सेनापति
जंग का बदलता दुखाना देखेगा
लगे रहे मुन्ना भाई, ये जंग गिराती है
शुरू की तुमने, हम तमारा देखेगा
ताकत है तो खेले, ताकत से फुटबॉल
मोहवा शतरंज का ये जाने किस खाने
बैठेगा?
लड़ रहे हम सालों से, हमको लड़ना आता है
आफिस में बैठ- बैठ बस वो निल यों ही
रेंकेगा
खोने को कुछ नहीं, काफ़न बाँधकर निकले हैं
शहदत होगी, आजन्दी का सूखने अने वारल
देखेगा।
- कुमार नन्दन, राम टैलर,
मन्डसौर मध्यप्रदेश

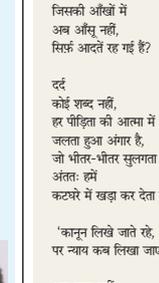
मेरी सिसकियाँ

मेरी सिसकियाँ भी अब
खागोशी में हल जाती हैं,
वो बात चुब कह न सके,
वो अँधियों से निकल जाती हैं।
दिल के कोने में छिपे दर्द
धीरे-धीरे बोल उठते हैं,
रात की तनहा चारद में
अँसू चुपके से छोल उठते हैं।
मेरी सिसकियाँ सुनता कौन,
यहाँ सब अपने में खोए है,
भौड़ के इस शोर भर जग में
हम फिर भी कितने रोए है।
कभी खुद से बातें करती हैं,
कभी यारों में खो जाती हैं,
आपने ही जज्बातों से
हर पल में टकराती हैं।
मेरी सिसकियाँ शायद,
किसी को सुनाई न दें,
पर इक्की हर धड़कन
में
मेरे जीने की वजह
छिपी रहे।
नेहा कुमारी

खागोशी के अपराधी

रातों में रोती बेटियाँ
और शहर की रोशनी
अपराधियों के स्वागत में चमकती
है।
हमारे भीतर कितना अंधेरा बाकी है
कि सत्य की चीख
दीवारों से टकराकर लौट आती है,
और हम
बहरों की तरह खड़े रहते हैं।
उनावा, हथरस, कटुआ
नाम बदलते हैं,
पर दरिद्रों की हँसी नहीं बदलती।
हर बार देह धाएल,
आत्मा कुचली जाती है,
और जूयों पर
जाँलिय सता
चुपकी चारद खाल देते हैं।
पीड़
फूल लेकर नहीं आती,
संबेदनाएँ कुचलकर आती हैं,
अपनी चेतना का आँसु संस्कार
करती है,
और पाखंड के चरणों में
मानवता गिरवी रख आती है।
किस मिट्टी के बने हैं हम,
क्यों राम की राख लेते हैं?
कब जागेंगा वह समाज
जिसकी आँखों में
अब अँसू नहीं,
सिर्फ आदतें रह गई हैं?
दर्द
कोई शब्द नहीं,
हर पीड़ा का आत्मा में
जलता हुआ अंगार है,
जो भीतर-भीतर सुलतता हुआ
अंततः हमें
कठपुतले में खड़ा कर देता है-
'कठपुतले लिखे जाते रहे,
पर न्याय कब लिखा जाएगा?'
अब शब्द नहीं
घबक बोलेंगे।
और छूटे बहरों से
नकाब उतारेंगे।

आज यह संकल्प नहीं,
निष्ण होना-
अपराधी देवता नहीं बनेंगे,
और पीड़ितों
मौत की शरण नहीं लेंगे।
याद रखो
चुपकी तटस्थ नहीं होती,
वह अपराधी को सभसे सुश्रुित
रण होती है।
जब तक हम खड़े नहीं होंगे,
वह गिरती रहेगी।
जाओ...
क्योंकि यह सिर्फ उनका नहीं
हमारी आत्मा का प्रश्न है।
और अगर अब भी
हम नहीं जागे
तो इतिहास गुवाह रहेगा-
कि इस बार
मानवता की हत्या
किसी दरिद्र ने नहीं,
ह म र री
खागोशी ने की
थी।
- धर्मन
कुमार धर्मी
दोसा,
राजस्थान



धर्मन
कुमार धर्मी
दोसा,
राजस्थान

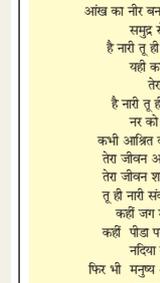
देश की जीवन रेखा

'ट्रेन स्टेशन पर है रस्की हुई,
मुस्कारों का आदव बजाती है।
मुस्कारि करना हो तो,
आम आदमी को ट्रेन ही याद आती
है।'
हमारे देश की जीवन रेखा है ये,
अनिकात में एकता का संदेश सुनाती
है।
कर्म इसका है निरिचत बना हुआ,
लोगों को अपनी मजिंलात पर
पहुँचती है।'
ललित महालकरी इंदौर

डुंगार-डुंगार गुँजे गाणगौर

गाणगौर आवे रे, छेल-मादल गुजे,
भीरान ये नाच उठे, बन-बन गीत सुँजे।
गीता माता पचायों, महुआ तले धाम,
डुंगार-डुंगार गुँजे, धारो पावन नाम।
नदछी किनारे छोरियाँ, फूलों सूँ साज,
भूकट में हँसे, गीते गाती न आबाज।
मादल तें धप धप, धिरके पैग-भार,
बागड़ी मोज्या में, गावे सगला घर।
काँकरिया र सता, पग-पग राम जगावे,
जंगल रो हरियाली, गौर गुण गावे।
भीलखु मन रहे, अगनिया पास,
गाणगौर री रात में, जागे आस-पास।
भीर-संकर देवो, सुख-धान रो दान,
भरती हँसे, भर जाए हर एक धान।
आवो रे मिलजुल, गावरो में
माझ,
गाणगौर री महिमा, पीढ़ी-पीढ़ी
धोरिए।
अनुपमा पटवारी 'ख्याति'
इंदौर, मध्य प्रदेश

नर और नारी
है नारी तेरा जीवन भी क्या है
कहीं आग का दरिया है
कहीं गहरे समुद्र का उलहा पानी है
जब जीवन में तेरे हलचल होती है
काम्यपिपासा मनुष्य को प्रवृत्ति से
जब तू जाल में शिकार हो जाती है
मन की पीड़ा
जबलत आगनी की तरह हो जाती है
उलहा पानी समुद्र का
आँख का नीर बन नदिया की तरह
समुद्र से जा मिलता है
है नारी तू ही नर की जीवन दाहिनी तर
यही काम्यपिपासा की विपसा नर
तेर शोषण करता है
है नारी तू ही जग जननी है
नर को जन्म देकर तू
कभी आश्रित कभी अपाहिन बन जाती है
तेरा जीवन आग का दरिया है
तेरा जीवन शांत समुद्र का गहवा पानी है
तू ही नारी संकट जीवन यापन करती है
कहीं जग में तपस्या सताती है
कहीं पीड़ा पर अपनी आँखों का नीर
नदिया की तरह बहाती है
फिर भी तू कहीं अधीनगी कहीं देवी कहलाती है
भादर अली इंदौर



अनुपमा पटवारी 'ख्याति'
इंदौर, मध्य प्रदेश

स्पेशल थाली : फोकर वाली

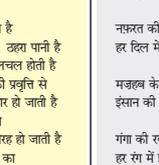
'भावनाओं का भाव,
कामनाओं की दाल,
तनाव का तड़का,
बाधाओं का बयार,
रस्सों का सपता,
खम्बों की खीर,
दर्द का ढँक-बुझ,
सहानुभूति की साँठ,
हसरतों का हलना,
बादलों का मुग्धा,
दुवों का अचार,
जब तक अचा न
सोच का सलाह,
चाहल की चटनी,
प्यार का पापड़,
सल्लाह की सक्की,
अंधार
फाँड का पुलाव,
भरसे का भुर्ता,
वो भी बिना भाव,
सब अनलिमिटेड,
यह है जीवन रूपी
दखे की स्पेशल थाली।
वो भी बिना पसों की
प्रे-फेकर वाली।
तब तक खाते जाओ
जब तक अचा न
जाओ।
रोज चलने दो
सिलसिला,
कोई भरसे नहीं कि
विवाहों की रोटी,
अंधार
कल मिला या ना
मिला।'
-प्रणय प्रभात-
श्याम (पार)

अधुरेपन का सौंदर्य

ठीक न होना भी ठीक है-
जैसे संख्या का धुंधलका
दिन और रात के बीच
एक अनकही प्रार्थना बनकर उलहा
जाता है।
खो जाना भी ठीक है-
जैसे कोई फाँडरी
जंगल के भीतर जाकर
अपने ही निशान भूल जाती है,
और तभी खोज लेती है
एक अमदेखा आकाश।
प्रगत होना भी ठीक है-
जैसे लहरें
किनारे की निरिचतता छोड़
समुद्र की अंतता में
अपने अर्थ तलाशती हैं।
मनुष्य कोई सीधी रेखा नहीं,
बह वृत्त भी नहीं-
वह तो एक संदन है,
जो हर क्षण बदलता है,
हर क्षण टूटता है,
हर क्षण नया जन्म लेता है।
हमने ओढ़ रखी है मुस्कानों की चारद,
भीतर के कोपन को छुपाने के लिए;
पर सच्चाई यह है-
कि हर हृदय में एक दार होती है,
जहाँ से प्रकाश भी आता है
और पीड़ा भी।
मस्करमन की सूखे तंगों में
रसमन अपना समीत रचते हैं-
कभी खोपामिन का उजस,
कभी सेरोटिन की शांति,
तो कभी कार्टिसोल का तूनाम।
इसी उता-चढ़ाव में
हम अपने होने को अर्थ लिखते हैं।
खो जाना-
विनाश नहीं,
एक मौन पुनर्निर्माण है,
जहाँ पुरानी पहचानें गिरती हैं,
और भीतर से
एक नया स्वर उगाता है।
अधुर-
अधुरकन नहीं,
संभवनाओं का कुहसा है,
जहाँ हर दिशा
एक प्रश्न बनकर खड़ी रहती है,
और उदार
धीरे-धीरे जन्म लेते हैं।
जब तुम कहते हो-
'मैं ठीक नहीं हूँ',
तभी तुम
सबसे अधिक सच्चे होते हो;
जब स्वीकारते हो-
'मैं खो गया हूँ',
तभी तुम

मिलन का अहसास दे गई*

तेरे मंद हँसीं खुरबू छत्र में बिखरी मोहब्बत का अहसास दे गई,
हवा में बिखरी तेरे गेसुओं की लट उठकर का नया अहसास दे गई।
तबखर में तुझको देखा है तुम गुल सी बहरो में छई रहती हो,
तेरे यादों का सिलसिला मेरी उल्लस के पल्लों का अहसास दे गई।
मेरे खामों में तुम रहती सदा दिल में तिरछी नजरों से उतर गई हो,
गुलशन की वादियों में तब हँडना इस्क का नया अहसास दे गई
मोहब्बत की है मैंने तुझसे,
कोई गुनाह नहि होता मेरे दिलवर,
इतना न इशाराओं तुम दिय मुझको तेरे हुस अद का सहसास दे
गई।
अब तुम मुझको मिल भी जाओ इशका
तुम मेरे खामों की हुन मलिका है,
तबहई में कट रही मेरी जिंदगी "कोशल
मिलन का अहसास दे गई।
- के, के, कोशल, इन्दौर,
मध्यप्रदेश



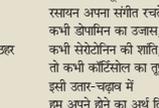
मध्यप्रदेश

गजल

मंदिर की सदा भी है, मस्करत की अर्जो भी है,
इस मुस्क की फिजाओं में मोहब्बत की कुर्बो भी है।
नसरत की सियासत से दिल टूट न जाए कहीं,
हर दिल में अमन का एक छोट-सा नर भी है।
मजबब के फ़सानों से दीवार न खड़ी करना,
इतना की क्रोत में ख की भी गिराओ भी है।
गंगा की रबनी हो या जुमे की नमाजें हों,
हर रंग में इस मुस्क का प्यार सा गुनो भी है।
मंदिर की चँटी हो या मस्करत की अर्जो यारो,
दोनों में खुद को ही रमनात का धुनो भी है।
नसरत की हवाओं को रुक मोड़ना होगा अप,
इस खूफ में अमन-ओ-मोहब्बत का समो भी है।
इंसाफ की राहों पर चलना ही इबादत है,
इस राह में हर दिल का सच्चा इतिहास है।
हिंदू हो कि मुस्लिम हो, सिख हो कि ईसाई हो,
हर दिल में मोहब्बत का रेशम सा मन्ना भी है।
मनजीत भावइया कहता है मुशारे में आज,
नसरत के अंधेरो में उम्मीद का दिवा भी है।
मजबब से नहीं बढ़ती इमान की पहचान,
इंसानियत में ही तो रब का आसमो भी है।
मनजीत सिंह कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

शक्ति उपासना पर्व

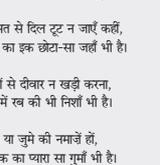
चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को मनात, हिंदू नव वर्ष लौकार ।
शक्ति उपासना पर्व पर, छकटा उलहा अपर।।
नी दिन की नवरात्रि में, होता भक्ति संचार ।
बल, अनुष्ठान, पाठ से, मनात यह लौकार ।
नी रूपों में मां देवी दर्शन, दिखलाती चमकार ।
भजन, कीर्तन और राजनों से, सजता सांचा दरवार ।
नवमी को होता हवन पूजन, कन्या भोज की कतार ।
नव रात्रि में श्रद्धा भाव से, शीश नवाते बारम्बार ।
शक्ति उपासना पर्व की, महिमा है
अपरंपर ।
चारों ओर गुंजाती रहती, माता की जय
जयकार ।
मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर



मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर

शक्ति उपासना पर्व

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को मनात, हिंदू नव वर्ष लौकार ।
शक्ति उपासना पर्व पर, छकटा उलहा अपर।।
नी दिन की नवरात्रि में, होता भक्ति संचार ।
बल, अनुष्ठान, पाठ से, मनात यह लौकार ।
नी रूपों में मां देवी दर्शन, दिखलाती चमकार ।
भजन, कीर्तन और राजनों से, सजता सांचा दरवार ।
नवमी को होता हवन पूजन, कन्या भोज की कतार ।
नव रात्रि में श्रद्धा भाव से, शीश नवाते बारम्बार ।
शक्ति उपासना पर्व की, महिमा है
अपरंपर ।
चारों ओर गुंजाती रहती, माता की जय
जयकार ।
मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर



मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर

अधुरेपन का सौंदर्य

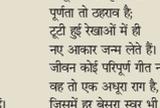
ठीक न होना भी ठीक है-
जैसे संख्या का धुंधलका
दिन और रात के बीच
एक अनकही प्रार्थना बनकर उलहा
जाता है।
खो जाना भी ठीक है-
जैसे कोई फाँडरी
जंगल के भीतर जाकर
अपने ही निशान भूल जाती है,
और तभी खोज लेती है
एक अमदेखा आकाश।
प्रगत होना भी ठीक है-
जैसे लहरें
किनारे की निरिचतता छोड़
समुद्र की अंतता में
अपने अर्थ तलाशती हैं।
मनुष्य कोई सीधी रेखा नहीं,
बह वृत्त भी नहीं-
वह तो एक संदन है,
जो हर क्षण बदलता है,
हर क्षण टूटता है,
हर क्षण नया जन्म लेता है।
हमने ओढ़ रखी है मुस्कानों की चारद,
भीतर के कोपन को छुपाने के लिए;
पर सच्चाई यह है-
कि हर हृदय में एक दार होती है,
जहाँ से प्रकाश भी आता है
और पीड़ा भी।
मस्करमन की सूखे तंगों में
रसमन अपना समीत रचते हैं-
कभी खोपामिन का उजस,
कभी सेरोटिन की शांति,
तो कभी कार्टिसोल का तूनाम।
इसी उता-चढ़ाव में
हम अपने होने को अर्थ लिखते हैं।
खो जाना-
विनाश नहीं,
एक मौन पुनर्निर्माण है,
जहाँ पुरानी पहचानें गिरती हैं,
और भीतर से
एक नया स्वर उगाता है।
अधुर-
अधुरकन नहीं,
संभवनाओं का कुहसा है,
जहाँ हर दिशा
एक प्रश्न बनकर खड़ी रहती है,
और उदार
धीरे-धीरे जन्म लेते हैं।
जब तुम कहते हो-
'मैं ठीक नहीं हूँ',
तभी तुम
सबसे अधिक सच्चे होते हो;
जब स्वीकारते हो-
'मैं खो गया हूँ',
तभी तुम



मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर

अधुरेपन का सौंदर्य

ठीक न होना भी ठीक है-
जैसे संख्या का धुंधलका
दिन और रात के बीच
एक अनकही प्रार्थना बनकर उलहा
जाता है।
खो जाना भी ठीक है-
जैसे कोई फाँडरी
जंगल के भीतर जाकर
अपने ही निशान भूल जाती है,
और तभी खोज लेती है
एक अमदेखा आकाश।
प्रगत होना भी ठीक है-
जैसे लहरें
किनारे की निरिचतता छोड़
समुद्र की अंतता में
अपने अर्थ तलाशती हैं।
मनुष्य कोई सीधी रेखा नहीं,
बह वृत्त भी नहीं-
वह तो एक संदन है,
जो हर क्षण बदलता है,
हर क्षण टूटता है,
हर क्षण नया जन्म लेता है।
हमने ओढ़ रखी है मुस्कानों की चारद,
भीतर के कोपन को छुपाने के लिए;
पर सच्चाई यह है-
कि हर हृदय में एक दार होती है,
जहाँ से प्रकाश भी आता है
और पीड़ा भी।
मस्करमन की सूखे तंगों में
रसमन अपना समीत रचते हैं-
कभी खोपामिन का उजस,
कभी सेरोटिन की शांति,
तो कभी कार्टिसोल का तूनाम।
इसी उता-चढ़ाव में
हम अपने होने को अर्थ लिखते हैं।
खो जाना-
विनाश नहीं,
एक मौन पुनर्निर्माण है,
जहाँ पुरानी पहचानें गिरती हैं,
और भीतर से
एक नया स्वर उगाता है।
अधुर-
अधुरकन नहीं,
संभवनाओं का कुहसा है,
जहाँ हर दिशा
एक प्रश्न बनकर खड़ी रहती है,
और उदार
धीरे-धीरे जन्म लेते हैं।
जब तुम कहते हो-
'मैं ठीक नहीं हूँ',
तभी तुम
सबसे अधिक सच्चे होते हो;
जब स्वीकारते हो-
'मैं खो गया हूँ',
तभी तुम



मोहन जोशी 'पीपुसू' इंदौर

अधुरेपन का सौंदर्य

ठीक न होना भी ठीक है-
जैसे संख्या का धुंधलका
दिन और रात के बीच
एक अनकही प्रार्थना बनकर उलहा
जाता है।
खो जाना भी ठीक है-
जैसे कोई फाँडरी
जंगल के भीतर जाकर
अपने ही निशान भूल जाती है,
और तभी खोज लेती है
एक अमदेखा आकाश।
प्रगत होना भी ठीक है-
जैसे लहरें
किनारे की निरिचतता छोड़
समुद्र की अंतता में
अपने अर्थ तलाशती हैं।
मनुष्य कोई सीधी रेखा नहीं,
बह वृत्त भी नहीं-
वह तो एक संदन है,
जो हर क्षण बदलता है,
हर क्षण टूटता है,
हर क्षण नया जन्म लेता है।
हमने ओढ़ रखी है मुस्कानों की चारद,
भीतर के कोपन को छुपाने के लिए;
पर सच्चाई यह है-
कि हर हृदय में एक दार होती है,
जहाँ से प्रकाश भी आता है
और पीड़ा भी।
मस्करमन की सूखे तंगों में
रसमन अपना समीत रचते हैं-
कभी खोपामिन का उजस,
कभी सेरोटिन की शांति,
तो कभी कार्टिसोल का तूनाम।
इसी उता-चढ़ाव में
हम अपने होने को अर्थ लिखते हैं।
खो जाना-
विनाश नहीं,
एक मौन पुनर्निर्माण है,
जहाँ पुरानी पहचानें गिरती हैं,
और भीतर से
एक नया स्वर उगाता है।
अधुर-
अधुरकन नहीं,
संभवनाओं का कुहसा है,
जहाँ हर दिशा
एक प्रश्न बनकर खड़ी रहती है,
और उदार
धीरे-धीरे जन्म लेते हैं।
जब तुम कहते हो-
'मैं ठीक नहीं हूँ',
तभी तुम
सबसे अधिक सच्चे होते हो;
जब स्वीकारते हो-
'मैं खो गया हूँ',
तभी तुम